# न्यायिक तख्तापलट

**साभार: राष्ट्रीय सहारा**
**( 31 जुलाई, 2017 )**


## सार

**इस लेख में लेखक ने पाकिस्तान में पनामा लीक मामले में नाम आने के बाद सर्वोच्च न्यायालय ने पाकिस्तानी प्रधानमंत्री नवाज शरीफ के अयोग्य घोषित करने को एक प्रकार से न्यायिक तख्तापलट बताया है, साथ ही इसके बाद पाकिस्तान के भविष्य की चर्चा की है।**


**विशेष- यह लेख सामान्य अध्ययन प्रश्न पत्र-II ( अंतर्राष्ट्रीय संबंध ) के लिए महत्वपूर्ण है।**

नवाज शरीफ को पाकिस्तान के प्रधानमंत्री पद से हटना पड़ा। सर्वोच्च न्यायालय यदि उन्हें प्रधानमंत्री पद के अयोग्य करार देता है तो फिर उनके पास चारा क्या बचता है? किंतु यह जो प्रचार चल रहा है कि पनामा पेपर्स लीक में उनका एवं उनके परिवार का नाम आने के कारण उन्हें दोषी माना गया है तो वह गलत होगा। यह बात ठीक है कि सुप्रीम कोर्ट में मामला जाने का आधार वही बना और उसके कारण नवाज शरीफ एवं उनके परिवार पर पहले से लगे भ्रष्टाचार के आरोप भी सम्मिलित कर दिए गए, लेकिन उन पर तो अभी मुकदमा आरंभ भी नहीं हुआ है। ध्यान रखिए 5 न्यायाधीशों की पीठ ने अपने आदेश में कहा है कि शरीफ और उनके बच्चों बेटी मरियम, बेटे हुसैन और हसन के खिलाफ मामला दर्ज किया जाए। सुप्रीम कोर्ट ने नेशनल अकाउंटेबिलिटी कोर्ट को 6 हफ्ते के अंदर मामला दर्ज करने और छह महीने में सुनवाई पूरी करने का आदेश दिया है। यह अजीब बात है कि अगर उन पर अभी मुकदमा दर्ज होना है, उसकी सुनवाई होनी है तो फिर सजा किस बात की मिली है? न्यायालय की 5 सदस्यीय पीठ ने माना कि वे सच बोलने वाले एवं ईमानदार नहीं हैं। इस बात पर हमारे यहां आश्चर्य व्यक्त किया जा सकता है कि केवल इतने पर किसी को प्रधानमंत्री पद के अयोग्य ठहरा दिया जा सकता है। दरअसल, पाकिस्तानी संविधान के अनुच्छेद 62 और 63 में सांसद बनने की योग्यता और अयोग्यता के जो प्रावधान दर्ज हैं, उनमें ऐसा संभव है। इसके अनुसार सांसद को ''सादिक' और ''अमीन', यानी सिर्फ सच बोलने वाला और ईमानदार होना चाहिए। यह एक ऐसी कसौटी है जिस पर खरा उतरना शायद ही किसी के लिए संभव होगा। इसके आधार पर उन्हें न्यायालय ने पद से हटा दिया। जो विश्लेषक इसे न्यायालय द्वारा तख्ता पलट की संज्ञा दे रहे हैं, वे गलत नहीं हैं। न्यायालय ने एक ज्वाइंट इन्वेस्टिगेटिव टीम (जेआईटी) यानी संयुक्त जांच दल का गठन किया था। उसने अपनी रिपोर्ट न्यायालय में सौंपी और उसके आधार पर न्यायालय ने शरीफ को अयोग्य करार दे दिया। हम मानते हैं कि छह सदस्यीय जेआईटी ने 10 जुलाई को सुप्रीम कोर्ट को जो रिपोर्ट दिया, उसमें शरीफ परिवार पर व्यापक भ्रष्टाचार की बू मिलती है। रिपोर्ट में कहा गया है कि 1990 में प्रधानमंत्री के तौर पर उन्होंने भ्रष्टाचार किया। अपने दूसरे कार्यकाल में शरीफ परिवार ने लंदन में संपत्तियां खरीदी थीं। इसे घोषित संपत्ति में शामिल नहीं किया गया। जेआईटी ने यह भी कहा कि शरीफ परिवार यह साबित नहीं कर सका कि इन संपत्तियों की खरीद के लिए उनके पास धन सही स्त्रोतों से आए। संयुक्त जांच दल ने अपनी रिपोर्ट में शरीफ पर एक साथ 15 मामले दोबारा चलाने की सिफारिश की है। इन मामलों में तीन 1994 से 2011 के बीच पीपीपी सरकार के दौरान दर्ज हुए थे, जबकि 12 अन्य परवेज मुशर्रफ के शासनकाल में। जेआईटी ने अपनी रिपोर्ट में कहा है कि नवाज शरीफ के बच्चे जिस शाही अंदाज में रहते हैं, वह उनकी कमाई से मेल नहीं खाता। शरीफ परिवार के लंदन के 4 अपार्टमेंट से जुड़ा मामला उन 8 मामलों में शामिल है, जिनकी नेशनल अकाउंटेबिलिटी ब्यूरो ने दिसम्बर 1999 में जांच शुरू की थी। पनामा लीक्स के अनुसार नवाज शरीफ के बेटों हुसैन और हसन के अलावा बेटी मरियम नवाज ने टैक्स हैवन माने जाने वाले ब्रिटिश वर्जिन आइलैंड में कम-से-कम चार कंपनियां शुरू कीं। इन कंपनियों से इन्होंने लंदन में बड़ी संपत्तियां खरीदीं। शरीफ परिवार ने इन संपत्तियों को गिरवी रखकर डॉएचे बैंक से करीब 70 करोड़ रुपये का कर्ज लिया। इसके अलावा, दूसरे दो अपार्टमेंट खरीदने में बैंक ऑफ स्कॉटलैंड ने उनकी मदद की। इसके अनुसार इस पूरे कारोबार और खरीद-फरोख्त में अघोषित आय लगाई गई। साफ है कि नवाज शरीफ और उनके परिवार पर पूरा मामला केवल पनामा पेपर्स तक सीमित नहीं है। हालांकि, शरीफ और उनका परिवार इन सारे आरोपों को खारिज करता रहा है। यह संभव है कि उनके परिवार पर लगे आरोप सही हों। लेकिन सामान्य न्यायिक प्रक्रिया यह कहती है कि आरोपित को न्यायालय में पूरी तरह अपना पक्ष रखने दिया जाए, पक्ष-विपक्ष के साक्ष्यों की जांच हो, दोनों पक्षों के वकील उनसे जिरह करें और पूरी सुनवाई के बाद तब कोई त्रुटिरहित न्यायिक फैसला दिया जाए। इस मामले में अभी यह सब होना बाकी है। जेआईटी की रिपोर्ट की प्रकृति हमारे यहां पुलिस छानबीन के आधार पर दायर होने वाले आरोप पत्र के समान थी। केवल आरोप पत्र के आधार पर किसी को सजा नहीं दी जा सकती है। इसलिए नवाज परिवार को सर्वोच्च न्यायालय ने कोई सजा नहीं दी है। नवाज परिवार की नियति आगे उन पर नेशनल अकाउंटेबिलिटी कोर्ट के फैसले पर निर्भर करता है। किंतु इससे नवाज के निजी राजनीतिक भविष्य पर तो ग्रहण लग ही गया है। इसके बाद वे किसी प्रधानमंत्री द्वारा अपना कार्यकाल पूरा न करने के रिकॉर्ड को तोड़ने से भी वंचित रह गए। लेकिन दूसरी ओर यह विचार भी प्रकट किया जा रहा है कि अगर सर्वोच्च न्यायालय इस तरह फैसले देता रहा तो भविष्य में भी किसी प्रधानमंत्री के लिए कार्यकाल पूरा करना कठिन हो जाएगा। पिछली सरकार के कार्यकाल में स्वयं नवाज शरीफ ने पीपीपी सरकार पर दबाव डालकर मुशर्रफ द्वारा बर्खास्त मुख्य न्यायाधीश इफ्तीखार चौधरी सहित अन्य न्यायाधीशों को पुनर्बहाल कराया। फिर मुशर्रफ के खिलाफ मुकदमे दायर कराए गए। इससे वहां के सर्वोच्च न्यायालय का चरित्र ही बदल गया है। वास्तव में जिस आधार पर नवाज तथा उनके एक मंत्री और रिश्तेदार सांसद

को अयोग्य करार दिया उस पर किसी को भी अयोग्य ठहराया जा सकता है। पाकिस्तानी मीडिया में ही यह सवाल उठ रहा है कि इमरान खान पर भी विदेश में एक कंपनी बनाने और उसे घोषित न करने का आरोप है। तो उनको भी सजा हो सकती है। ऐसा माना जा रहा है कि नवाज एवं न्यायालय और सेना के बीच संबंध अच्छे नहीं चल रहे थे। न्यायालय ने जो जेआईटी गठित की उसमें सैन्य खुफिया के दो और आईएसआई के तीन सदस्य थे। इस नाते देखा जाए तो शरीफ के खिलाफ यह न्यायालय एवं सेना दोनों का तख्तापलट है।

## संबंधित तथ्य

- पनामा पेपर्स पानामनियन कंपनी मोसेक फोनसेका द्वारा इकट्ठा किया हुआ 1 करोड़ 15 लाख गुप्त फाइलों का भंडार है। इनमें कुल 2,14,000 कंपनियों से सम्बन्धित जानकारियाँ है। इसमें उस कंपनी के निर्देशक आदि की जानकारी भी है। यह अब तक पाँच देशों के नेताओं के बारे में बता चुका है, जिसमें अर्जेंटीना, आइसलैंड, सउदी अरब, युक्रेन, संयुक्त अरब अमीरात है। इसके अलावा यह 40 देशों के सरकार से जुड़े आदि लोगों के बारे में भी बता चुका है, इसमें ब्राजील, चीन, पेरु, फ्रांस, भारत, मलेशिया, मेक्सिको, पाकिस्तान, इंडोनेशिया, रूस, दक्षिण अफ्रीका, स्पेन, सीरिया और ब्रिटेन है।
- पनामा मध्य अमरीका का एक छोटा सा देश है जो पनामा भूडमरू पर स्थित है यह उत्तर और दक्षिण अमेरिका के दो महाद्वीपों को धरती के एक पतले डमरू से जोड़ता है। इसकी जनसंख्या लगभग 40 लाख है। पनामा की मुद्रा स्फीति नीची है और यह अपने देश की मुद्रा के रूप में अमेरिकी डॉलर का इस्तेमाल करता है। पनामा में दो प्रकार के टैक्स सिस्टम हैं- पहला टेरेट्रियल टैक्स सिस्टम इसमें रेसिडेंट और नॉन रेसिडेंट कंपनियों से तभी टैक्स वसूला जाता है, जब इनकम देश में ही जनरेट हुई हो और दूसरा कॉर्पोरेशन टैक्स सिस्टम, इसमें जिन कंपनियों की इनकम 1.5 मिलियन डॉलर से ज्यादा है उन पर 25 फीसदी टैक्स लगेगा, साथ ही पनामा में विदेशी निवेश पर कोई टैक्स नहीं लगता है। इसी वजह से पनामा में लगभग 3.5 लाख गोपनीय कंपनियाँ है। पनामा में एक फर्म है जिसका नाम है-सेक फान्सेका। यह फर्म विदेशियों को पनामा में शेल कंपनी बनाने में मदद करती है जिसके जरिये कोई भी व्यक्ति संपत्ति को अपना नाम या पता बताये बिना खरीद सकता है। इसी कंपनी के लीक हुऐ दस्तावेजों में दुनियाभर के बड़े नेताओं प्रमुख खिलाड़ियों और अन्य बड़ी हस्तियों के नाम सामने आये हैं, जिन्होनें अरबों डॉलर की राशि पनामा में छुपाई हुई है जिससे इन लोंगों द्वारा देश के कोष को टैक्स बचाकर नुकसान पहुँचाया गया है

## संभावित प्रश्न

**पनामा लीक मामले में न्यायालय के निर्णय के बाद पाकिस्तान में राजनैतिक अस्थिरता बढ़ने की सम्भावना अधिक है, ऐसे में इसका भारत पर क्या प्रभाव पड़ सकता है ? चर्चा करें।**

# फसल बीमा योजना घोटाला

**योगेन्द्र यादव**
(अध्यक्ष, स्वराज अभियान)

**साभारः प्रभात खबर**
**( 1 अगस्त, 2017 )**

## सार

**इस लेख में लेखक ने प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के उद्देश्यों को रेखांकित करते हुए ये बताने की कोशिश की है कि फसल बीमा योजना बैंकों के खाली हो रहे खजानों को भरने का एक प्रयास मात्र है, इसका किसान को लाभ पहुँचाने का कोई इरादा नहीं है। अतः ये योजना नहीं एक घोटाला है।**

**विशेष- यह लेख सामान्य अध्ययन प्रश्न पत्र-III ( भारतीय अर्थव्यवस्था ) के लिए महत्वपूर्ण है।**

पिछले दो साल में मैंने सरकार की फसल बीमा योजना के बारे में यह बात कई बार सुनी है कि- 'भाई साहब, यह किसान की फसल का बीमा नहीं है। यह तो बैंकों ने अपने लोन का बीमा करवाया है।' साल 2015 से लेकर अब तक जय किसान आंदोलन के साथियों के साथ मिल कर मैंने देशभर में 'किसान मुक्ति यात्रा' की। ये यात्राएं उन्हीं इलाकों में हुई, जहां किसानों पर सूखे या बाजार की मार पड़ी थी। हर सभा में मैं पूछता था, 'क्या किसी किसान को बीमे का भुगतान हुआ?' अधिकांश किसानों ने तो बीमे का नाम ही नहीं सुना। जो किसान क्रेडिट कार्ड वाले थे, उनमें से कुछ पढ़े-लिखे किसानों को पता था कि उनके खाते से बीमे का प्रीमियम कटा है। सैकड़ों सभाओं में मुझे एक-दो से ज्यादा किसान नहीं, मिले जिन्हें कभी बीमे का मुआवजा मिला।

धीरे-धीरे मुझे फसल बीमा का गोरखधंधा समझ आने लगा। जिस किसान ने बैंक से लोन लिया है, उसके बैंक खाते से जबरदस्ती बीमा का प्रीमियम काट लिया जाता है।

यही नहीं बीमाधारक किसान को बीमा पॉलिसी जैसा कोई भी दस्तावेज तक नहीं दिया जाता। यानी किसान को पता भी नहीं होगा कि उसका बीमा हो चुका है और उसे कब कितना मुआवजा मिल सकता है। अगर पता लग भी गया, तो मुआवजा लेने की असंभव शर्तें हैं। अगर आपकी फसल बरबाद हो गयी, तो मुआवजा पाने के लिए आपको यह साबित करना पड़ेगा कि आपकी तहसील या पंचायत में कम-से-कम आधे किसानों की फसल भी बरबाद हुई है।

पिछले हफ्ते एक साथ कई सूचनाएं सार्वजनिक होने से फसल बीमा योजना का पर्दाफाश हो गया। महा लेखाकार (सीएजी) ने 2011 और 2016 के बीच तमाम फसल बीमा योजनाओं के ऑडिट की रिपोर्ट संसद के सामने रखी और सेंटर फॉर साइंस एंड एनवायरनमेंट (सीएसइ) ने प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के पहले साल का मूल्यांकन करते हुए एक रिपोर्ट छापी। साथ में संसद के इस सत्र में सरकार ने प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के नवीनतम आंकड़े सदन के पटल पर रखे। इन तीनों स्रोतों से साफ जाहिर होता है कि सरकारी फसल बीमा योजना किसान के साथ कितना भद्दा मजाक है।

सीएजी का ऑडिट 2011 से 2016 के बीच चल रही तमाम सरकारी फसल बीमा योजनाओं के बारे में ह। 'राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना', 'संशोधित राष्ट्रीय किसान बीमा योजना', 'मौसम आधारित फसल बीमा योजना' जैसी इन योजनाओं से किसान का कोई भला नहीं हुआ।

दो तिहाई किसानों को सरकारी योजनाओं की जानकारी भी नहीं थी। देश के 22 प्रतिशत किसानों का ही बीमा किया जा सका, वह भी सर्वश्रेष्ठ साल में। बीमाधारकों में 95 प्रतिशत से अधिक किसान वो थे, जिन्होंने बैंकों से ऋण लिया। अधिकतर मामलों में बीमे की राशि ठीक उतनी ही थी, जितना बैंक का बकाया ऋण था। यानी किसान कार्यकर्ताओं की शिकायत वाजिब थी। बैंक मैनेजरों ने ऋण की वापसी सुनिश्चित करने के लिए किसान से बिना पूछे, बिना बताये उनका बीमा करवा दिया।

सीएजी की रिपोर्ट इस आरोप की भी पुष्टि करती है कि बीमे का मुआवजा बहुत कम किसानों तक पहुंचा है। कभी सरकार ने अपने हिस्से का प्रीमियम नहीं दिया, तो कभी बैंक ने देरी की। सरकारी और प्राइवेट बीमा कंपनियों ने खूब पैसा बनाया। रिपोर्ट प्राइवेट बीमा कंपनियों के घोटाले की ओर भी इशारा करती है। सरकार ने कंपनियों को पेमेंट कर दिया, लेकिन कंपनियों ने किसान को पेमेंट नहीं किया। कंपनियों से यूटिलाइजेशन सर्टिफिकेट तक नहीं मांगा गया। नियमों का उल्लंघन करते पकड़ी गयी कंपनियों को ब्लैक लिस्ट नहीं किया गया। किन किसानों को पेमेंट हुई, उसका रिकॉर्ड तक नहीं रखा गया।

अगर आप मोदी सरकार से इस रिपोर्ट के बारे में पूछें तो हमारे मंत्री कहेंगे कि यह तो पुरानी बात है। पुरानी योजनाएं अब बंद हो गयी हैं। अब इनके बदले नयी 'प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना' आ गयी है। केंद्र सरकार ने इस नयी योजना में पिछले साल के तुलना में चार गुना पैसा खर्च किया।

लेकिन बीमाधारी किसानों की संख्या 22 प्रतिशत से बढ़ कर 30 प्रतिशत ही हो पायी। इस योजना में भी लोनधारी किसानों को ही शामिल किया गया। पिछली योजनाओं की तरह छोटे किसान और बटाइदार इस योजना के लाभ से भी वंचित रहे हैं। योजनाओं के नाम बदल जाते हैं, पर सरकारी काम नहीं बदलते।

हां, इस साल कंपनियों ने रिकॉर्ड मुनाफा जरूर कमाया। लोकसभा में 18 जुलाई को दिये गये उत्तर के अनुसार, 2016 की खरीफ फसल ने

कंपनियों को किसानों और सरकारों से कुल मिला कर 15,685 करोड़ रुपये का प्रीमियम मिला और अब तक किसानों को सिर्फ 3634 करोड़ रुपये के मुआवजे का भुगतान किया गया।

इसका कारण सिर्फ अच्छी बारिश और फसल नहीं थी। तमिलनाडु में रबी की फसल में पिछले 140 साल का सबसे भयानक सूखा पड़ा। वहां कंपनियों को 954 करोड़ रुपये का प्रीमियम मिला और अब तक सिर्फ 22 करोड़ रुपये के मुआवजे का भुगतान हुआ है।

31 जुलाई को प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के अंतर्गत खरीफ का बीमा करवाने की अंतिम तारीख थी। बीमा कंपनियां, बैंक मैनेजर, सरकारी बाबू और नेता- सब फसल बीमा के लिए लालायित हैं, सिवाय बेचारे किसान के।

## संबंधित तथ्य

**फसल बीमा योजना में शामिल किये गये मुख्य तथ्य निम्नलिखित हैं:**

- प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना की भुगतान की जाने वाली प्रीमियम (किस्तों) दरों को किसानों की सुविधा के लिये बहुत कम रखा गया है ताकि सभी स्तर के किसान आसानी से फसल बीमा का लाभ ले सकें।
- इसके अन्तर्गत सभी प्रकार की फसलों (रबी, खरीफ, वाणिज्यिक और बागवानी की फसलें) को शामिल किया गया है। खरीफ (धान या चावल, मक्का, ज्वार, बाजरा, गन्ना आदि) की फसलों के लिये 2% प्रीमियम का भुगतान किया जायेगा। रबी (गेहूँ, जौ, चना, मसूर, सरसों आदि) की फसल के लिये 1.5% प्रीमियम का भुगतान किया जायेगा। वार्षिक वाणिज्यिक और बागवानी फसलों बीमा के लिये 5% प्रीमियम का भुगतान किया जायेगा।
- सरकारी सब्सिडी पर कोई ऊपरी सीमा नहीं है। यदि बचा हुआ प्रीमियम 90% होता है तो ये सरकार द्वारा वहन किया जाएगा।
- शेष प्रीमियम बीमा कम्पनियों को सरकार द्वारा दिया जायेगा। ये राज्य तथा केन्द्रीय सरकार में बराबर-बराबर बाँटा जायेगा।
- ये योजना राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना (एन.ए.आई.एस.) और संशोधित राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना (एम.एन.ए.आई.एस.) का स्थान लेती है।
- इसकी प्रीमियम दर एन.ए.आई.एस. और एम.एन.ए.आई.एस. दोनों योजनाओं से बहुत कम है, साथ ही इन दोनों योजनाओं की तुलना में पूरी बीमा राशि को कवर करती है।
- इससे पहले की योजनाओं में प्रीमियम दर को ढकने का प्रावधान था जिसके परिणामस्वरुप किसानों के लिये भुगतान के कम दावे पेश किये जाते थे। ये कैपिंग सरकारी सब्सिडी प्रीमियम के खर्च को सीमित करने के लिये थी, जिसे अब हटा दिया गया है और किसान को बिना किसी कमी के दावा की गयी राशि के खिलाफ पूरा दावा मिल जायेगा।
- प्रधानमंत्री फसल योजना के अन्तर्गत तकनीकी का अनिवार्य प्रयोग किया जायेगा, जिससे किसान सिर्फ मोबाईल के माध्यम से अपनी फसल के नुकसान के बारें में तुरंत आंकलन कर सकता है।
- प्रधानमंत्री फसल योजना के अन्तर्गत आने वाले 3 सालों के अन्तर्गत सरकार द्वारा 8,800 करोड़ खर्च करने के साथ ही 50% किसानों को कवर करने का लक्ष्य रखा गया है।
- मनुष्य द्वारा निर्मित आपदाओं जैसे; आग लगना, चोरी होना, सेंध लगना आदि को इस योजना के अन्तर्गत शामिल नहीं किया जाता है।
- प्रीमियम की दरों में एकरुपता लाने के लिये, भारत में सभी जिलों को समूहों में दीर्घकालीन आधार पर बांट दिया जायेगा।
- ये नयी फसल बीमा योजना 'एक राष्ट्र एक योजना' विषय पर आधारित है। ये पुरानी योजनाओं की सभी अच्छाईयों को धारण करते हुये उन योजनाओं की कमियों और बुराईयों को दूर करता है।

## संभावित प्रश्न

**हाल ही में संसद में रखे गए आंकड़ों एवं अन्य रिपोर्ट्स में ये बात सामने आई है कि प्रधानमंत्री कृषि बीमा योजना के क्रियान्वयन में एवं उसके अपेक्षित परिणाम हासिल करने में सफलता प्राप्त नहीं हुई है। इस कथन से आप कहाँ तक सहमत हैं? चर्चा करें।**

# अंबेडकर का समतावादी आर्थिक दर्शन

साभार : प्रभात खबर
( 2 अगस्त, 2017 )

प्रीतम सिंह

**सार**

**इस लेख में लेखक के द्वारा अम्बेडकर को आर्थिक विचारक के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है तथा उनके आर्थिक विचारों की विस्तृत चर्चा की गयी है।**

**विशेष- यह लेख सामान्य अध्ययन प्रश्न पत्र-I ( आधुनिक भारत का इतिहास ) के लिए महत्वपूर्ण है।**

भारतीय संविधान के मुख्य शिल्पकार के रूप में प्रख्यात डॉ. बी.आर. अंबेडकर एक मौलिक आर्थिक विचारक भी थे। उनकी आर्थिक सोच की मौलिकता को इसलिए भी उदारवादी करार दिया जा सकता है क्योंकि उन्होंने मार्क्सवाद, नव-शास्त्रीय आर्थिक सोच, बाजारोन्मुखी अर्थव्यवस्था या फिर सरकार द्वारा नियंत्रित किसी भी अर्थव्यवस्था का अनुसरण नहीं किया। हालांकि उनका यह उदारवाद विभिन्न आर्थिक मुद्दों पर उनके विचारों में एकता और समरूपता पर आधारित है। इस समरूपता की वजह भारतीय समाज के दलित वर्ग के प्रति उनकी चिंता थी। इस तरह के दृष्टिकोण की वजह से उनकी तुलना कार्ल मार्क्स से करना एकदम सही है, जो कि पूंजीवाद के कड़े विश्लेषण को लेकर एकदम निष्ठुर थे। यह सख्ती केवल अकादमिक नहीं थी, बल्कि यह कामगार वर्ग के हितों के साथ करीब से जुड़ी हुई थी।

कामगार वर्ग के प्रति मार्क्स और दलितों के प्रति अंबेडकर दोनों ही मामलों में आर्थिक स्थितियों के विश्लेषण में किसी तरह की दलगत सोच के उद्देश्य से कोई समझौता नहीं किया गया। इसके विपरीत दोनों ने ही कामगार वर्ग (कार्ल मार्क्स) और दलितों (अंबेडकर के मामले में) के हितों को आगे बढ़ाने के लिए आवश्यक शर्त के रूप में आर्थिक स्थितियों का वैज्ञानिक विश्लेषण किया। भारत के संदर्भ में विशेष रूप से और सामान्य रूप से दक्षिण एशिया के संदर्भ में वर्ग और जाति की सामाजिक श्रेणियां अपने स्वायत्त दर्जे के बावजूद परस्पर व्याप्त हैं।

अंबेडकर ने जिन तीन मुद्दों पर अपनी बौद्धिक ऊर्जा को केंद्रित किया, वे थे : अर्थव्यवस्था में पैसे का आदान-प्रदान, व्यापक कृषि रणनीति के हिस्से के रूप में कौन कितनी जमीन पर काबिज है तथा सार्वजनिक वित्त, विशेषकर संघीय वित्त व्यवस्था का तरीका।

पैसे के बारे में अपने लेखन में उन्होंने 1930 के दशक में पैसे की आपूर्ति को सोने के भंडार से अलग करने से संबंधित कींस दृष्टिकोण को सीधी चुनौती दी। कींस का तर्क था कि इंग्लैंड जैसी विकसित पूंजीवादी अर्थव्यवस्थाओं में मौद्रिक विनिमय तंत्र के विकास के चलते इसे सोने के भंडार के साथ जोड़कर पैसे की आपूर्ति को सीमित करने की कोई आवश्यकता नहीं है। अंबेडकर ने इस सोच का विरोध सोने के प्रति किसी प्रकार के विशेष लगाव अथवा आकर्षण के चलते नहीं किया, बल्कि इस वजह से किया क्योंकि उनका मानना था कि पैसे की आपूर्ति को सोने के भंडार से अलग करने की वजह से पैसे की अत्यधिक आपूर्ति की संभावनाएं बढ़ जाएंगी, जिसके परिणामस्वरूप देश में आर्थिक अस्थिरता और मुद्रास्फीति को बढ़ावा मिल सकता है।

समाज के गरीब वर्ग को ध्यान में रखते हुए अंबेडकर की सोच थी कि मुद्रास्फीति और वित्तीय अस्थिरता का गरीब वर्ग पर प्रतिकूल असर पड़ेगा जबकि निवेश के वैकल्पिक तरीकों के चलते अमीर लोग असल में फायदा कमा सकते हैं। वर्ष 2007-08 के बाद से अनियमित वित्तीय बाजारों के कारण वैश्विक पूंजीवादी व्यवस्था में व्याप्त आर्थिक संकट तथा आय और संपत्ति में असमानता अंबेडकर की भविष्यवाणियों की पुष्टि करते हैं। उनके लिए पैसे की आपूर्ति तथा सोने के भंडार के तकनीकी सवाल का मूल्यांकन भारतीय समाज के सबसे गरीब वर्ग दलितों के कल्याण के मुद्दे पर विशेष रुख के प्रभाव के नजरिए से किया जाना जरूरी है।

अंबेडकर ने भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था की परिस्थितियों के आकलन के लिए भी इसी तरीके को अपनाया। उनका तर्क था कि भारत में भूमि के बंटवारे के कारण जमीन का औसत आकार इतना कम हो गया है कि आर्थिक रूप से इनका संचालन बेमानी-सा हो गया है। इस वजह से उन्होंने कृषि भूमि का औसत आकार बढ़ाने के उद्देश्य से जमीन के एकीकरण की वकालत की। पहली नजर में यह सोच छोटे जमीनधारकों के हितों के खिलाफ प्रतीत हो सकती है। लेकिन आर्थिक दक्षता के नजरिये से अंबेडकर ने गरीब किसानों या भूमिहीन कामगारों के हित वाले अर्थहीन भूमि आकार के बचाव की बात करना उचित नहीं समझा। इसलिए उन्होंने सहकारी कृषि प्रणाली का प्रस्ताव रखा, जिससे कि अर्थव्यवस्था का बड़े स्तर पर लाभ उठाने के लिए छोटी भू-इकाइयों का बड़ी भू-इकाइयों में एकत्रीकरण सुनिश्चित हो सके। उनकी सोच थी कि सहकारी खेती न केवल छोटे भू-धारकों, बल्कि भूमिहीन कामगारों, जिनमें से अधिकतर दलित थे, के लिए भी वांछनीय थी। ऐसे में हम समझ सकते हैं कि खेती के वैकल्पिक तरीकों और सहकारी खेती को सबसे ज्यादा वांछनीय प्रणाली बताने के पीछे उनका अंतिम लक्ष्य दलितों के आर्थिक हितों की रक्षा था।

अंबेडकर ने जांच के लिए जिस तीसरे मुख्य मुद्दे को चुना, वह था सरकार के राजस्व तथा खर्च के विभिन्न चरणों से संबंधित

सार्वजनिक वित्त का प्रश्न। उनकी सोच का मूल आधार यह था कि शासन के प्रत्येक स्तर पर खर्च की जिम्मेदारियों को पूरा करने के लिए राजस्व के उचित स्रोत होने चाहिए। अंबेडकर का यह भी तर्क था कि आय-व्यय के मात्रात्मक आयामों के साथ-साथ इसके गुणात्मक आयामों के तरीके की जांच भी जरूरी है। कोई सरकार अच्छा-खासा राजस्व जुटाने में तो सफल हो सकती है लेकिन मंत्रियों और अफसरों के शाही अनुत्पादक खर्चों के चलते सरकार इस राजस्व को फिजूल में गंवा भी सकती है। इसके बनिस्बत अगर स्वास्थ्य तथा शिक्षा जैसे अच्छे कामों पर खर्चे में मामूली-सी बढ़ोतरी भी की जाती है तो इससे जीवनस्तर में बहुत ज्यादा सुधार हो सकता है। दलितों तथा समाज के अन्य गरीब तबकों के लिए इस तरह के जनहित के कामों पर पैसा खर्च करना विशेष तौर पर जरूरी है।

एक बहुस्तरीय शासन मॉडल में अंतर-सरकारी संबंधों का आकलन करने के लिए अंबेडकर ने भी दलितों के जीवन पर केंद्रीकरण बनाम विकेंद्रीकरण के प्रभाव को जांचा। एक दृष्टिकोण से वह केंद्रीकरण के हिमायती नजर आते हैं और दूसरे दृष्टिकोण से वह अत्यधिक केंद्रीकरण को एक खतरा मानते हैं। केंद्रीयकरण के पक्ष में उनका तर्क था कि विकेंद्रीकरण दलितों के मुकाबले ऊपरी जाति के स्थानीय संभ्रांत वर्ग को और सशक्त बनाता है। वहीं केंद्रीकरण लोकतंत्र को कमजोर कर सकता है। उनके मुताबिक लोकतंत्र का कमजोर होना दलितों के लिए ठीक नहीं है। संक्षेप में यह कह सकते हैं कि इसी वजह से अंबेडकर ने जवाहरलाल नेहरू के इस प्रस्ताव का विरोध कर उसे खारिज कर दिया था, कि भारतीय संविधान में संसद में साधारण बहुमत के आधार पर संशोधन किया जा सकता है। अंबेडकर को लगा कि नेहरू का प्रस्ताव अत्यधिक केंद्रीकरण का रास्ता साफ करता है और इस प्रकार वह संविधान में इस बात को शामिल करवाने में सफल रहे कि संविधान में संशोधन के लिए सरकार के पास संसद में कम से कम दो-तिहाई बहुमत जरूरी है।

जाति तथा भेदभाव के अन्य रूपों का विरोध करने वालों को नीति संबंधी सभी विकल्पों का आकलन करने के लिए दलितों की चिंता के अंबेडकर के तरीके को केंद्रीय निर्धारिक मानदंड बनाना सीखना होगा। वैश्विक जलवायु परिवर्तन के दौर में आर्थिक गतिविधियों के स्थायी और समतावादी तरीकों तथा दलितों और नव यथार्थवाद के बीच अनिवार्य एकरूपता के लिए अंबेडकर के विचारों का सृजनात्मक विकास जरूरी है।

## अम्बेडकर के कुछ प्रमुख आर्थिक विचार

- भारतीय अर्थव्यवस्था की समस्या, वित्तीय प्रणाली और रुपये पर उनके कई महत्त्वपूर्ण काम हैं। उनके द्वारा तीन बड़े काम हैं-'ईस्ट इंडिया कंपनी का प्रशासन और वित्तीय प्रबंध', 'ब्रिटिश भारत में प्रांतीय वित्त व्यवस्था का विकास' और 'रुपये की समस्या-उद्भव और समाधान'।
- उनका 1918 का शोधपत्र आज भी सार्थक है। इसमें उन्होंने यह दिखाया था कि खेती की उत्पादकता सिर्फ जमीन और खेतों के आकार पर ही नहीं, बल्कि उत्पादन के अनेक कारकों पर निर्भर करती हैं। इसीलिए भारत में कृषि में पूंजी निवेश की सबसे ज्यादा आवश्यकता है, क्योंकि ब्रिटिश राज में इस क्षेत्र में पूंजी निवेश गिरा है।
- 1923 में प्रकाशित 'रुपये की समस्या- उद्भव और समाधान' अंबेडकर की एक और महत्वपूर्ण पुस्तक है। इसमें उन्होंने 19वीं शताब्दी से भारतीय मुद्रा प्रणाली के विकास की विवेचना की है और भारत के लिए किस प्रकार की मुद्रा प्रणाली उपयुक्त है, इसका सुझाव रखा है। उन्होंने मुद्रा के मूल्य की स्थिरता को अत्यंत आवश्यक माना है और वित्तीय नीति के आय वितरण एवं विषमता पर होने वाले प्रभाव पर प्रकाश डाला है।

## संभावित प्रश्न

**भारतीय इतिहास अम्बेडकर के मात्र राजनैतिक एवं संवैधानिक व्यक्तित्व से परिचित है जबकि अगर हम उनके आर्थिक विचारों पर जोर डालें तो ज्ञात होता है कि वो अपने समकालीन विचारको में से सबसे बड़े आर्थिक विश्लेषक थे। इस कथन को स्पष्ट करें।**

# अतुल्य भारत-विश्व पर्यटन का केन्द्र बनने की ओर अग्रसर

मलयिनकिल गोपालकृष्णन
(वरिष्ठ पत्रकार, स्तंभकार)

साभारः पीआईबी
( 3 अगस्त, 2017 )

**सार**

**यह लेख पी आई बी से लिया गया है। यह लेख अगस्त माह में स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर लिखी जा रही श्रृंखला का एक भाग है। इसमें लेखक ने पर्यटन को लेकर भारत को विकसित करने की सरकार के प्रयासों की चर्चा की है।**

**विशेष- यह लेख सामान्य अध्ययन प्रश्न पत्र-II ( शासन व्यवस्था ) के लिए महत्वपूर्ण है।**

'एक ऐसी जगह जिसे सभी लोग देखना चाहते हैं और एक बार इसके दर्शन कर लेने के बाद, भले ही उन्होंने इसकी केवल झलक भर देखी हो, दुनिया की तमाम छवियों को इस एक झलक पर न्योछावर करने को तैयार हों'' ये पंक्तियां हैं मार्क ट्वेन की जो उन्होंने भारत के बारे में लिखी थीं। 'अतुल्यं भारत' वाक्यांश से मन में अनेक अनोखे चित्र उभरते हैं जिनमें उत्तर में हिमालय की हिम मंडित चोटियों से लेकर पश्चिम में फैला विशाल मरुस्थल, पूर्व की अनोखी वनस्पतियां, गर्म जलवायु के वर्षावन, मनोहर झीलें, रमणीक समुद्र तट और दक्षिण में मानसून की वर्षा की फुहारें शामिल हैं। इसके अलावा भी यहां बहुत कुछ है जैसे यहां के अनेक ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और धरोहर स्थल जो देश की उस विविधता को प्रदर्शित करते हैं जो सदियों पुरानी है।

दुनिया भर के पर्यटक भारत आकर भांति-भांति के जो अनुभव हासिल करते हैं, वहीं इसे स्वर्ग के समान और 'अतुल्यक' बनाते हैं। यह एक ऐसा स्वर्ग है जहां आने की चाहत वे बार-बार अपने मन में करते हैं। जहां दुनिया के अनेक देशों में पर्यटकों को छुट्टियां मनाते हुए सिर्फ एक तरह का अनुभव प्राप्त होता है, वहीं भारत में उन्हें जलवायु, भूगोल, संस्कृति, कला, साहित्य, जातीयता और खान-पान संबंधी विविध अनुभव हासिल होते हैं।

देश की इस अतुल्य धरोहर, विरासत और प्रकृति का लाभ उठाने के लिए सरकार ने जो अनेक योजनाएं बनाई हैं उनके अच्छे परिणाम सामने आने लगे हैं। भारत आने वाले विदेशी पर्यटकों की संख्या और उससे सरकार के राजस्व तथा विदेशी मुद्रा की आय में बढ़ोतरी इसका स्पष्ट प्रमाण हैं।

सरकार अपनी नयी पर्यटन नीतियों और कार्यक्रमों से जिन लक्ष्यों  को प्राप्त करने के लिए प्रयासरत है उनमें पर्यटन से देश की अर्थव्यवस्था और राजस्व का समावेशी एवं निरंतर विकास, रोजगार के अवसरों का सृजन, विदेशी निवेश में वृद्धि तथा दुनिया के देशों के साथ सांस्कृतिक संबंधों में मजबूती सम्मिलित हैं।

**भारत में पर्यटन का विकास**

भारत सदियों से विदेशी यात्रियों, पर्यटकों और व्यापारियों के आकर्षण का केन्द्र रहा है। दुनिया के अन्य देशों, सभ्यताओं और लोगों के साथ भारतीय उप-महाद्वीप का निरंतर संपर्क हमारी सांस्कृतिक विविधता में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है जिसे हमारी भाषाओं, रीति-रिवाजों, त्योहार व उत्सवों, संगीत, नृत्य और कलाओं आदि में देखा जा सकता है। लेकिन यह भी एक तथ्य है कि आजादी के बाद के शुरुआती वर्षों में पर्यटन क्षेत्र पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया गया, क्योंकि उस समय कोई यह कल्पना भी नहीं कर सकता था कि यह बड़े पैमाने पर आमदनी उपलब्ध  कराने वाला उद्योग साबित हो सकता है।

भारतीय पर्यटन के क्षेत्र की महत्व पूर्ण घटनाओं में से एक वर्ष 1966 में भारतीय पर्यटन विकास निगम (आईटीडीसी) का गठन था। इसका मूल उद्देश्य देश में पर्यटन के बुनियादी ढांचे और सेवाओं का विकास करना था। इसी तरह के संगठन राज्यों  में भी बनाए गये।

पर्यटन क्षेत्र की गतिविधियों और नीतिगत पहलों ने 1980 के दशक के बाद सही मायने में गति पकड़ी। 1982 में, यानी देश की आजादी के 35 साल बाद भारत में पहली बार पर्यटन के बारे में राष्ट्रीय नीति की घोषणा की गयी। इसी वर्ष भारत में एशियाई खेलों की मेजबानी करने की योजना भी बनी थी जिसके तहत विदेश से बड़ी संख्या में लोगों के आगमन की संभावनाओं को ध्यान में रखते हुए विदेशी मेहमानों के रहने, ठहरने और मनोरंजन की सुविधाओं को केन्द्र बनाकर देश में पर्यटन पर जबरदस्त चर्चा भी छिड़ी। पर्यटन के बारे में आम दिलचस्पी और बहस से ही पहली राष्ट्रीय पर्यटन नीति का जन्म हुआ जिसके तहत इस क्षेत्र के विकास के लिए एक कार्य योजना तैयार की गयी।

इसके बाद के दशकों में भारत की वैश्विक छवि में बदलाव आया और भारत झुग्गी-झोंपड़ियों वाले और गरीबी से ग्रस्तक देश की बजाय विकासशील देश और उसके बाद उभरती हुई आर्थिक महाशक्ति के रूप में सामने आने लगा। इससे बाद के दशकों में भारत आने वाले विदेशी पर्यटकों की संख्या में लगातार तेजी से बढ़ी।

एनडीए सरकार के पहले कार्यकाल के दौरान 2002 में सरकार ने नयी पर्यटन नीति तैयार की जिसका उद्देश्य था-पर्यटन को देश के आर्थिक विकास के प्रमुख कारक के रूप में प्रतिष्ठित करना और रोजगार तथा गरीबी उन्मूलन में इसके प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभावों का इस तरह से फायदा उठाना जिससे कि पर्यावरण पर भी इसका प्रतिकूल असर न पड़ने पाये।

**अतुल्य् भारत**

'अतुल्य भारत' की आत्मा , विविधता में एकता में अंतर्निहित है। भारत, यहां आने वाले पर्यटकों को भांति-भांति के अनुभव एकमुश्त उपलब्ध कराता है। देश का प्रत्येक क्षेत्र सैलानियों को अपनी तरह का अनोखा अनुभव देता है जो शेष भारत से एकदम अलग होता है।

देश के उत्तरी भाग में पर्यटक बर्फ से ढकी चोटियों और वादियों के बीच पर्वतीय क्षेत्र का आनंद उठा सकते हैं तो दक्षिण में सागर का अनंत विस्तार उन्हें खूबसूरत तटों, झीलों और नदियों के मनोरम दृश्यों की जो झलक दिखाता है उसका अनुभव एकदम अलग होता है।

अंडमान-निकोबार द्वीप समूह या लक्षद्वीप में समुद्री जीवों और शांत द्वीपों की पवित्र सुंदरता के दर्शन होते हैं। दुनिया के सबसे बड़े धार्मिक समागम-कुंभ मेले में भाग लेकर पर्यटक भारत की सदियों पुरानी धार्मिक परम्परा का हिस्सा बन सकते हैं।

देश के विभिन्न भागों में आयोजित किये जाने वाले वार्षिक साहित्योत्स व देश की कला और साहित्य की समृद्ध परम्परा की स्पष्ट झांकी प्रस्तुत करते हैं।

इस तरह भारत के अनोखे गंतव्य स्थल, यहां के ग्रामीण अंचल, रंगारंग उत्सव, रंगबिरंगी पोशाकें, पारंपरिक पकवान और विभिन्न आस्था वाले लोगों का आपस में मिलजुल कर रहना एक ऐसा आकर्षण है जो छुट्टियां बिताने के लिए विदेश यात्राएं करने वाले पर्यटकों के लिए भारत को एक बेमिसाल जगह बना देता है।

**नयी नीतियां और कार्यक्रम**

भारत की विविधता, यहां के कम खर्चीले पर्यटन स्थानों, गंतव्य स्थलों की विशिष्टो ब्रांड छवियों और बढ़ते निजी व विदेशी निवेश ने भी अन्य देशों से भारत में पर्यटकों के आवागमन को बढ़ावा देने में अपना योगदान किया है।

देश में पर्यटन की संभावनाओं के विस्तार और इसमें विविधता लाने तथा इसे साल के सभी दिनों पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र बनाए रखने के लिए 'नीश टूरिज्म प्रोडक्ट्स ' यानी खास तरह के पर्यटकों के लिए खास तरह की सुविधाओं की शुरुआत से भी विदेशी पर्यटकों की संख्या में इजाफा हुआ है। इस तरह के नीश प्रोडक्ट्स (विशिष्ट पर्यटक सुविधाओं) में वन्यजीव एवं पारिस्थितिकीय पर्यटन; बैठक, प्रोत्साहन, सम्मेलन और कार्यक्रमों के आयोजन के लिए पर्यटन, टिकाऊ पर्यटन, गोल्फन पर्यटन, पोलो पर्यटन, चिकित्सा, पर्यटन और स्वास्थ्य पर्यटन आदि शामिल हैं।

इधर वीजा ऑन अराइवल (विदेशियों के स्वदेश आगमन के बाद उन्हें वीजा देने) सुविधा और ई-टूरिज्म वीजा सुविधा प्रारंभ किये जाने से भी भारत आने वाले विदेशी पर्यटकों की संख्या बढ़ी है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार मई 2017 में भारत आए विदेशी पर्यटकों की संख्या 6.30 लाख तक पहुंच चुकी थी, जबकि मई 2016 में यह 5.27 लाख और मई 2015 में 5.09 लाख थी। जनवरी से मई 2017 के दौरान भारत को पर्यटन से 74,008 करोड़ रुपये की आमदनी हुई जो 19.2 प्रतिशत की बढ़ोतरी को दर्शाता है।

सरकार अध्यात्मिक पर्यटन और तीर्थ पर्यटन को बढ़ावा देने पर विशेष रूप से ध्यान दे रही है। इससे भी पर्यटन क्षेत्र की क्षमता का और अधिक उपयोग हो सकेगा और भारत आने वाले विदेशी पर्यटकों की संख्या में बढ़ोतरी होगी। पर्यटन की संभावनाओं वाले सर्किटों के योजनाबद्ध और प्राथमिकता के आधार पर विकास के लिए सरकार ने 'स्वादेश दर्शन' नाम की योजना शुरू की है। इसका उद्देश्य लोगों में संस्कृति और विरासत के महत्व के बारे में जागरूकता पैदा करने के लिए देश में पर्यटन को बढ़ावा देना है।

विश्व की आर्थिक महाशक्ति बनने की दिशा में अग्रसर भारत के बढ़ते महत्व को ध्यान में रखते हुए यह उम्मीद की जा सकती है कि आने वाले वर्षों में यहां आने वाले विदेशी पर्यटकों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि होगी।

**संभावित प्रश्न**

**भारत को अगर आर्थिक महाशक्ति बनना है तो उसे पर्यटन के क्षेत्र में एक लम्बी छलांग लगानी होगी, जिसके लिए भारत को सुरक्षा, अवसंरचना, स्वच्छता आदि को विश्व स्तरीय बनाना होगा। इस कथन के सन्दर्भ में भारत के द्वारा इस दिशा में उठाये गए कदमों की चर्चा करें।**

# ऊर्जा सुरक्षा पर ध्यान से भारत होगा बलवान

साभार: बिजनेस स्टैंडर्ड
( 4 अगस्त, 2017 )

अरूणाभ घोष
(लेखक ऊर्जा, पर्यावरण एवं जल परिषद (सीईईडब्ल्यू) के मुख्य कार्याधिकारी)

## सार

**इस लेख में लेखक ने इस बात की चर्चा की है कि भारत को अपनी ऊर्जा जरूरतों के अनुसार ऊर्जा क्षेत्रक का विकास करना होगा, साथ ही लेखक इस लेख में बताने का प्रयास कर रहे हैं कि भारत ऊर्जा के क्षेत्र में एक बड़ी ताकत बनकर उभर सकता है, लेकिन इसके लिए विशेष प्रयासों की जरूरत होगी।**

**विशेष- यह लेख सामान्य अध्ययन प्रश्न पत्र-III ( पर्यावरण एवं अर्थव्यवस्था ) के लिए महत्वपूर्ण है।**

कुछ समय पहले तक भारत वैश्विक स्तर पर ऊर्जा के क्षेत्र में एक छोटा खिलाड़ी हुआ करता था लेकिन इस कहानी में बड़ी तेजी से बदलाव हो रहा है। भारत अतीत में भी जीवाश्म ईंधनों के लिए आयात पर ही निर्भर है। इसका नतीजा यह हुआ कि भारत हमेशा वैश्विक तेल बाजार में झटके आने की सूरत में पड़ने वाले आर्थिक बोझ को लेकर चिंतित रहा करता था। ईरान की क्रांति के बाद रुपये का अवमूल्यन हो गया था और 1980 के दशक में ईरान-इराक युद्ध के चलते भारत को तेल उत्पादों की कमी का सामना करना पड़ा था। पहले खाड़ी युद्ध ने भारत को महंगे दाम पर पेट्रोलियम उत्पाद खरीदने के लिए मजबूर किया था। वर्ष 1996 में हुए कुर्द गृहयुद्ध ने भी भारत के चालू खाते में तगड़ी चोट पहुंचाई थी। दूसरे खाड़ी युद्ध के बाद भी भारत में ईंधन के दाम बढ़ गए थे। भारतीय ऊर्जा क्षेत्र के लिए ये घटनाएं बड़ी सिरदर्द साबित हुई थीं लेकिन वैश्विक बाजार में भारत की स्थिति मामूली स्तर पर ही बनी हुई थी।

हालांकि वर्ष 2030 तक दुनिया भर में होने वाले दैनिक तेल कारोबार में भारत की हिस्सेदारी 12.5 फीसदी के स्तर तक पहुंच जाएगी जो 2014 में महज 7.4 फीसदी थी। दुनिया की बड़ी अर्थव्यवस्थाओं में भारत में ऊर्जा की मांग सबसे तेज गति से बढने का अनुमान है। इस तरह भारत न तो ऊर्जा उत्पादों की कीमतें तय करने की स्थिति में होगा और न ही उसकी भूमिका नगण्य ही होगी। 21वीं सदी के वैश्विक ऊर्जा बाजार में भारत की भूमिका काफी कुछ वैसी ही होगी जैसी 20वीं सदी के दूसरे हिस्से में यूरोप की होती थी। इसका मतलब है कि भारत एक बड़ी ऊर्जा शक्ति के रूप में भले ही तब्दील हो जाएगा लेकिन वह वर्चस्वकारी भूमिका में नहीं होगा।

प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं ने अपनी ऊर्जा सुरक्षा को राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में पुनर्परिभाषित किया है। अमेरिकी ऊर्जा स्वतंत्रता एवं सुरक्षा अधिनियम 2007 ने नवीकरणीय ईंधनों के प्रोत्साहन, उपभोक्ता संरक्षण और ऊर्जा सक्षमता में निवेश के अलावा ऊर्जा स्वतंत्रता सुनिश्चित करने पर जोर दिया गया था। दरअसल पिछले दशक में जीवाश्म ईंधन एवं गैस के विस्तार के साथ अमेरिका में ऊर्जा परिदृश्य बड़ी तेजी से बदला है। फूकूशिमा परमाणु संयंत्र में हुए हादसे के बाद जापान ने भी वर्ष 2014 में अपनी चौथी रणनीतिक ऊर्जा योजना पेश की थी जिसमें ऊर्जा सक्षमता बढ़ाने के साथ शून्य-उत्सर्जन स्तर वाली ऊर्जा का उत्पादन दोगुना करने और ऊर्जा के मामले में आत्म-निर्भरता को 2030 तक दोगुना करने का लक्ष्य रखा गया था। चीन की 12वीं पंचवर्षीय योजना में घरेलू स्तर पर ऊर्जा उत्पादन बढ़ाने के साथ ही ऊर्जा आपूर्ति के स्रोतों और आयात मार्गों का विविधीकरण करने का जिक्र किया गया था। अंतरराष्ट्रीय ऊर्जा एजेंसी (आईईए) चाहती है कि उसके सदस्य देश सीमित अवधि के साथ ही लंबी अवधि के लिए भी अपनी ऊर्जा सुरक्षा पर ध्यान दें।

दुनिया के प्रमुख देश अब ऊर्जा जरूरतों के लिए विदेशी आपूर्ति पर कम निर्भरता चाहते हैं और उन्हें यह भी समझ आ गया है कि ऊर्जा स्वतंत्रता से ऊर्जा सुरक्षा अलग है। भारत के लिए ऊर्जा सुरक्षा का मतलब है कि महत्त्वपूर्ण ऊर्जा संसाधन उसे समुचित मात्रा में और किफायती एवं अनुमानित कीमत पर उपलब्ध हों, उनकी आपूर्ति में व्यवधान का कम-से-कम जोखिम हो और वर्तमान एवं आसन्न खतरों के मद्देनजर पर्यावरण एवं भावी पीढियों के लिए ऊर्जा संपोषणीयता भी सुनिश्चित की जा सके। लेकिन ऊर्जा हालात पर नजर रखने के लिए कोई वैश्विक ऊर्जा संगठन नहीं है। वैश्विक

भारत की शर्तों पर ऊर्जा सुरक्षा: भारत के लिए ऊर्जा सुरक्षा जरूरी संसाधनों की उपलब्धता, पहले से अंदाजा लगाई जा सकने वाली कीमतों और न्यूनतम आपूर्ति व्यवधानों के साथ ही पर्यावरणीय पहलुओं का भी ख्याल रखने पर निर्भर करती है। परंपरागत तौर पर भारत ने द्विपक्षीय तरीके से ऊर्जा संसाधनों को सुरक्षित करने की कोशिश की है। इसके अलावा संयुक्त अरब अमीरात, कतर, ईरान, सऊदी अरब और मोजाम्बिक जैसे देशों के साथ ऊर्जा संबंधों को भी गहरा किया जा रहा है। इसके साथ ही आपूर्ति श्रृंखलाओं को सुरक्षित रखने के लिए समुद्री नौवहन सुरक्षा सहयोग को भी आश्वस्त करने की जरूरत है। चीन, जापान और दक्षिण कोरिया ने एलएनजी खरीद के अधिक अनुकूल और लचीले सौदों के लिए मिलकर बातचीत करने के वास्ते मार्च में एक गठजोड़ किया है। भारत को भी एलएनजी की बढ़ती मांग को देखते हुए आपूर्ति सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए इस तरह के गठबंधन के बारे में विचार करना चाहिए।

अर्थव्यवस्था को चलाने वाले दो ईंधन: ऊर्जा और वित्त किसी भी अर्थव्यवस्था में ईंधन का काम करते हैं। वित्त के अभाव में ऊर्जा आर्थिक प्रगति को रफ्तार नहीं दे सकती है। नवीकरणीय ऊर्जा और ऊर्जा सक्षमता को बड़े पैमाने पर पूंजी निवेश की जरूरत होती है। इस तरह की ढांचागत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बड़े पैमाने पर बिना जोखिम वाली संस्थागत पूंजी की दरकार होती है। इसके अलावा ऊर्जा से संबंधित शोध एवं विकास कार्यों में भी लगातार निवेश की जरूरत होती है। भारत में ऊर्जा क्षेत्र का रूपांतरण अंतरराष्ट्रीय सहयोग के बगैर मुमकिन नहीं हो पाएगा। दरअसल भारत को पूंजी की आसान उपलब्धता के साथ ही नई तकनीक के स्तर पर भी अंतरराष्ट्रीय सहयोग की जरूरत होगी। भारत ने दूसरे देशों के साथ मिलकर ऊर्जा के क्षेत्र में शोध एवं विकास कार्य शुरू किए हैं और छोटे स्तर के द्विपक्षीय क्रेडिट भी मिलने लगे हैं। ऊर्जा के भंडारण की तकनीकें, विभिन्न वित्तीय जोखिमों को कम करने और बॉन्ड बाजार को सशक्त करने जैसे असली गेम चेंजर तो अभी तक नदारद ही हैं। इस दिशा में अवसर मौजूद हैं जिन्हें आजमाने की जरूरत है।

ऊर्जा शासन बंटा हुआ है और प्रायः असंगत भी होता है। एक बड़ी ऊर्जा शक्ति होने के नाते एक क्रियाशील, विश्वसनीय और पारदर्शी ऊर्जा बाजार का होना उसके राष्ट्रीय हित में है। इसलिए भारत को एक ऐसा मंच तैयार करने की कोशिश करनी चाहिए जो ऊर्जा सुरक्षा को पुनर्परिभाषित करने और वैश्विक ऊर्जा शासन को नया ढांचा देने के बारे में संवाद का जरिया बन सके। इसके कई कारण हैं।

पहला, ऊर्जा जगत का स्वरूप अब 1970 के दशक में पैदा हुए तेल संकट से काफी अलहदा नजर आता है। आर्कटिक क्षेत्र में मौजूद विशाल संसाधनों पर नियंत्रण की होड़, तेल बाजार में उठापटक, गैस का अनिश्चित भविष्य, निम्न-कार्बन स्तर वाली ऊर्जा की तरफ रुझान बढने या नाभिकीय सुरक्षा को लेकर चिंताएं बढने जैसे नए मुद्दे अब अहम हो चुके हैं। जहां ऊर्जा पर कूटनीतिक संवाद अब भी काफी हद तक ऊर्जा सुरक्षा के बारे में संकीर्ण परिभाषा तक सीमित हैं, वहीं इन उभरते रुझानों पर चर्चा वैज्ञानिक एवं तकनीकी-आर्थिक संवाद में ही उलझी हुई है। अंतरराष्ट्रीय ऊर्जा से संबंधित राजनीतिक अर्थशास्त्र पर बहुत कम चर्चा होती है, इसके बारे में समझ तो और भी कम है।

दूसरा, अंतरराष्ट्रीय ऊर्जा के गतिशील विश्व की व्याख्या के लिए जरूरी सिद्धांतों, अवधारणाओं और ढांचों की अनुपस्थिति को संवाद की कमी के लिए जिम्मेदार बताया जा सकता है। इन मुद्दों पर होने वाली चर्चाओं पर वर्तमान विकसित देशों की चिंताओं का सीधा प्रभाव नजर आता है। इसमें उदीयमान अर्थव्यवस्थाओं के समक्ष उत्पन्न खतरों और अवसरों का कोई जिक्र नहीं होता है जबकि ऊर्जा की मांग तो इन्हीं देशों से आएगी। विकासशील देश ही ऊर्जा क्षेत्र में नवाचार को प्रोत्साहित करेंगे और ऊर्जा व्यापार एवं निवेश के पैटर्न को आकार देंगे। इससे भी अधिक अहम बात यह है कि ऊर्जा नीति और जलवायु नीति को एक साथ समाहित करने का कोई भी साझा संदर्भ नजर नहीं आ रहा है और अगर दिखता भी है तो वह विखंडित है।

तीसरा, अंतरराष्ट्रीय संबंधों के कई जानकार और पेशेवर अब भी दुनिया को देश-केंद्रित व्यवस्था के ही रूप में देखते हैं। राष्ट्र-राज्यों को कूटनीतिक तरीकों या सैन्य हस्तक्षेप के माध्यम से अपना प्रभाव कायम करने वाले प्राथमिक अभिकर्ता के तौर पर देखा जाता है। ऊर्जा जगत काफी जटिल स्वरूप वाला है। इसमें देशों और उनकी तेल कंपनियों के साथ बड़ी निजी कंपनियों, कई छोटे अन्वेषकों, उपभोक्ता-नागरिक और स्थानीय ऊर्जा सहकारी समितियों के अलावा वित्तीय बाजार की भी भूमिका होती है। ऐसे में देश-केंद्रित वैश्विक धारणा के तहत ऊर्जा सुरक्षा को काफी हद तक निरर्थक प्रयास समझा जाता है। इससे संसाधनों का इस्तेमाल प्रभावहीन होने के साथ ही हम ऊर्जा संबंधी शोध एवं विकास, निवेश और वाणिज्यीकरण के लिए सहकारी ढांचा तैयार करने के अवसर भी गंवा बैठते हैं।

चौथा, अभी तक ऊर्जा प्रणाली के समक्ष उत्पन्न हो रहे नए खतरों के बारे में अधिक चर्चा नहीं की गई है। इन खतरों में ऊर्जा के आधारभूत ढांचे के लिए जलवायु जोखिम, समेकित ऊर्जा ग्रिड और प्रणाली पर साइबर हमले, स्थापित एवं उदीयमान ऊर्जा कंपनियों के आर्थिक रूप से बैठ जाने का जोखिम और नई ऊर्जा तकनीकों के लिए जरूरी महत्त्वपूर्ण खनिजों तक पहुंच बाधित होने का जोखिम भी शामिल है।

पांचवां, बिजली या खाना पकाने के आधुनिक ईंधन तक अब भी अरबों लोगों की पहुंच नहीं होने से मानव स्वास्थ्य, आर्थिक उत्पादकता और स्त्री-पुरुष असमानता पर काफी बुरा असर पड़ता है। किफायती, भरोसेमंद, संपोषणीय आधुनिक ऊर्जा सेवाओं तक सभी की पहुंच अब एक महत्त्वपूर्ण संपोषणीय विकास लक्ष्य बन चुका है। लेकिन विकास का यह आयाम बड़े ऊर्जा संस्थानों, आधारभूत ढांचे और निवेश के शोर में अक्सर गायब हो जाता है।

भारत को अपनी आवाज हासिल करनी होगी, अपनी चिंताओं को स्वर देना होगा और ऊर्जा बाजार के रास्तों पर सफर की दिशा खुद तय करनी होगी। इसके अलावा भारत को ऊर्जा रूपांतरण और ऊर्जा कूटनीति को भी तवज्जो देनी होगी। इसे वैश्विक ऊर्जा शासन के संबंध में नए विचारों को भी पेश करने की जरूरत है। भारत को ऊर्जा सुरक्षा पर संवाद को भी आगे ले जाना चाहिए।

## भारत में ऊर्जा सुरक्षा से जुड़े प्रमुख विचार

1. **भारत की शर्तों पर ऊर्जा सुरक्षा:** भारत के लिए ऊर्जा सुरक्षा जरूरी संसाधनों की उपलब्धता, पहले से अंदाजा लगाई जा सकने वाली कीमतों और न्यूनतम आपूर्ति व्यवधानों के साथ ही पर्यावरणीय पहलुओं का भी ख्याल रखने पर निर्भर करती है। परंपरागत तौर पर भारत ने द्विपक्षीय तरीके से ऊर्जा संसाधनों को सुरक्षित करने की कोशिश की है। इसके अलावा संयुक्त अरब अमीरात, कतर, ईरान, सऊदी अरब और मोजाम्बिक जैसे देशों के साथ ऊर्जा संबंधों को भी गहरा किया जा रहा है। इसके साथ ही आपूर्ति श्रृंखलाओं को सुरक्षित रखने के लिए समुद्री नौवहन सुरक्षा सहयोग को भी आश्वस्त करने की जरूरत है। चीन, जापान और दक्षिण कोरिया ने एलएनजी खरीद के अधिक अनुकूल और लचीले सौदों के लिए मिलकर बातचीत करने के वास्ते मार्च में एक गठजोड़ किया है। भारत को भी एलएनजी की बढ़ती मांग को देखते हुए आपूर्ति सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए इस तरह के गठबंधन के बारे में विचार करना चाहिए।
2. **अर्थव्यवस्था को चलाने वाले दो ईंधन:** ऊर्जा और वित्त किसी भी अर्थव्यवस्था में ईंधन का काम करते हैं। वित्त के अभाव में ऊर्जा आर्थिक प्रगति को रफ्तार नहीं दे सकती है। नवीकरणीय ऊर्जा और ऊर्जा सक्षमता को बड़े पैमाने पर पूंजी निवेश की जरूरत होती है। इस तरह की ढांचागत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बड़े पैमाने पर बिना जोखिम वाली संस्थागत पूंजी की दरकार होती है। इसके अलावा ऊर्जा से संबंधित शोध एवं विकास कार्यों में भी लगातार निवेश की जरूरत होती है। भारत में ऊर्जा क्षेत्र का रूपांतरण अंतरराष्ट्रीय सहयोग के बगैर मुमकिन नहीं हो पाएगा। दरअसल भारत को पूंजी की आसान उपलब्धता के साथ ही नई तकनीक के स्तर पर भी अंतरराष्ट्रीय सहयोग की जरूरत होगी। भारत ने दूसरे देशों के साथ मिलकर ऊर्जा के क्षेत्र में शोध एवं विकास कार्य शुरू किए हैं और छोटे स्तर के द्विपक्षीय क्रेडिट भी मिलने लगे हैं। ऊर्जा के भंडारण की तकनीकें, विभिन्न वित्तीय जोखिमों को कम करने और बॉन्ड बाजार को सशक्त करने जैसे असली गेम चेंजर तो अभी तक नदारद ही हैं। इस दिशा में अवसर मौजूद हैं जिन्हें आजमाने की जरूरत है।

## संभावित प्रश्न

**भारत को वैश्विक स्तर पर ऊर्जा कूटनीति के माध्यम से अन्य देशों के साथ अपने संबंधों को बेहतर कर अपनी ऊर्जा जरूरतों को सुनिश्चित करना होगा। इस कथन का विश्लेषण करें।**

# 'देश के हित में अपनी सुविधाएं छोड़ो' वरुण गांधी की सांसदों को सलाह

साभार: पंजाब केसरी
( 5 अगस्त, 2017 )

विजय कुमार

## सार

**इस लेख में लेखक ने भाजपा सांसद वरुण गाँधी के सांसदों के द्वारा देशहित में पेंशन छोड़ने के प्रस्ताव की विस्तृत चर्चा की है तथा उसके पक्ष-विपक्ष को भी दर्शाया है।**

**विशेष- यह लेख सामान्य अध्ययन प्रश्न पत्र-II ( भारतीय राजव्यवस्था ) के लिए महत्वपूर्ण है।**

हम अक्सर लिखते रहते हैं कि अनेक महत्वपूर्ण राष्ट्रीय एवं सार्वजनिक समस्याओं पर हमारे सांसदों एवं विधायकों में सहमति नहीं बन पाती। यहां तक कि विभिन्न मुद्दों पर असहमति के कारण प्राय: संसद व विधानसभाओं की कार्रवाई ठप्प होने के अलावा सदस्यों में मारा-मारी भी होती रहती है, परंतु अपनी सुविधाओं, वेतन-भत्तों में वृद्धि आदि के मामले में सभी सदस्य मतभेद भुला कर एक स्वर से अपनी मांगें मनवाने में इकट्ठे हो जाते हैं।

इस बारे भाजपा सांसद वरुण गांधी ने 1 अगस्त को लोकसभा में सांसदों में अपने वेतन बढ़वाने के लगातार बढ़ रहे रुझान पर उन्हें आड़े हाथों लिया और कहा, ''एक दशक के दौरान इंगलैंड में सांसदों के वेतन 13 प्रतिशत बढ़े जबकि भारत में सांसदों ने अपने वेतन 400 प्रतिशत बढ़ाए हैं।'' ''अत: देश के हित में सांसदों के वेतन तय करने के लिए भारत में भी ब्रिटिश संसदीय प्रणाली की भांति ही एक स्वतंत्र अराजनीतिक संस्था होनी चाहिए।'' ''इतनी वृद्धि के औचित्य पर प्रश्नचिन्ह लगाते हुए उन्होंने कहा,''अपनी ही तनख्वाह बढ़ाने का अपने आप को ही अधिकार देना हमारे लोकतंत्र के नैतिक सिद्धांतों के अनुरूप नहीं है।''

''सांसद निजी व्यापारिक कम्पनियों की तरह वेतन ले रहे हैं जहां वेतन वृद्धि कमाए हुए लाभ के आधार पर तय होती है परंतु हमारा काम देश की सेवा का है।'' ''सांसदों को बार-बार वेतन वृद्धि की मांग उठाते देख कर मैं सदन की नैतिक सोच को लेकर चिंता में पड़ जाता हूं। एक वर्ष में देश में 18,000 किसानों ने आत्महत्या की, हमारे सांसदों का ध्यान किधर है?'' उन्होंने गांधी जी के इस कथन का भी उल्लेख किया कि''सांसदों तथा विधायकों का वेतन उनके द्वारा की गई देश सेवा के अनुपात में ही होना चाहिए।'' ''समाज के सबसे निचले तबके के आदमी की आर्थिक दशा को देखते हुए हमें कम से कम इस संसद की अवधि के लिए अनिवार्यत: अपनी सुविधाएं छोड़नी चाहिए। जिस प्रकार देश के पहले प्रधानमंत्री नेहरू की कैबिनेट ने अपनी पहली ही बैठक में उस समय लोगों की मुश्किलें देखते हुए पहले 6 महीने तक वेतन न लेने का फैसला किया था।''वरुण गांधी ने संसद में विभिन्न महत्वपूर्ण विधेयक 'सही प्रक्रिया का पालन किए बिना' पारित किए जाने का मुद्दा भी उठाया और कहा, ''पिछले पंद्रह वर्षों के दौरान संसद में पेश 50 प्रतिशत विधेयक संसदीय समिति को नहीं भेजे गए, तथा अनेक महत्वपूर्ण विधेयक बिना बहस के ही पारित कर दिए गए जबकि ये संसद में विधिवत बहस के बाद ही पारित होने चाहिएं।'' ''बिना बहस विधेयक पारित करने से संसद का उद्देश्य ही समाप्त हो जाता है। संसद को कायम ही इसलिए किया गया है कि यह प्रस्तावित कानूनों का विश्लेषण करके यकीनी बनाए कि हर कानून एक स्पष्ट नीति के तहत बनाया गया है जबकि विधेयकों को पारित करने की हड़बड़ी से यह सिद्ध होता है कि इसके पीछे 'नीति' नहीं बल्कि 'राजनीति' काम कर रही है।'' गांधी ने संसद की बैठकों में भाग लेने के प्रति सांसदों की दिलचस्पी में कमी को 'शर्मनाक' बताते हुए कहा कि 1953 में लोकसभा की 123 बैठकें हुई थीं जो 2016 में घट कर 75 ही रह गई हैं।

सांसदों में संसद से गैरहाजिर रहने के रुझान के सम्बन्ध में माकपा महासचिव सीताराम येचुरी ने भी आवाज उठाते हुए 22 जुलाई को कहा था कि''संसदीय कार्रवाइयों को सुचारू रूप से चलाने के लिए यह बहुत जरूरी है कि संसदीय कार्यों के प्रति अरुचि तथा लापरवाही समाप्त हो। ''अत: ऐसा कानून बनाने की जरूरत है जिसके द्वारा संसद में सांसदों की कम से कम 100 दिन की सक्रिय उपस्थिति अनिवार्य की जाए।'' वर्तमान राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में ये मुद्दे सीधे तौर पर जनता से जुड़े हैं। हमारे अधिकांश सांसद-विधायक पहले ही करोड़ों के मालिक हैं ऐसे में वरुण गांधी का सांसदों द्वारा अपने वेतन में अंधाधुंध वृद्धि के रुझान को रोकने तथा महत्वपूर्ण विधेयकों को पारित करने के लिए सही प्रक्रिया के पालन और येचुरी द्वारा संसद में सांसदों की 100 दिन की सक्रिय उपस्थिति के सुझावों पर तुरंत ध्यान देने की जरूरत है।

भला इस बात से कौन इन्कार कर सकता है कि महंगाई की मार आम आदमी पर कितनी भी पड़े लेकिन उसकी आमदनी उस हिसाब से नहीं बढ़ती परन्तु हमारे सांसदों और विधायकों पर यह सिद्धांत लागू नहीं होता जो संसद और विधानसभाओं में तो विभिन्न मुद्दों को लेकर लड़ते-झगड़ते रहते हैं, परंतु अपने वेतन-भत्ते बढ़ाने की बात आने पर सारे मतभेद भुला कर इकट्ठे हो जाते हैं।

## प्रमुख तथ्य

1. सांसदों को आजीवन पेंशन देने का प्रावधान संसद ने ही कानून बना कर किया है। यह व्यवस्था काफी सोच-समझकर की गई होगी। जो लोग इस मुद्दे को सुप्रीम कोर्ट लेकर गए हैं उनके तर्कों को इलाहाबाद हाईकोर्ट खारिज कर चुका है। दरअसल इस मामले में पूर्व सांसदों की छवि को गलत तरीके से पेश किया जा रहा है।
2. सुप्रीम कोर्ट ने पूर्व सांसदों की पेंशन के मामले में एक गैर सरकारी संगठन की याचिका पर केंद्र सरकार, निर्वाचन आयोग सहित लोकसभा और राज्यसभा महासचिव को नोटिस जारी किया था । याचिका में कहा गया था कि सांसदों को पेंशन मिलना संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन है। यह अनुच्छेद देश के सभी नागरिकों को समानता का अधिकार प्रदान करती है। चूंकि रिटायरमेंट के बाद पेंशन तभी मिलती है जब उसमें कर्मचारी और नियोक्ता का अंशदान रहा हो। सांसद अपने कार्यकाल के दौरान अपने वेतन-भत्तों में से किसी प्रकार अंशदान पेंशन के लिए नहीं देते हैं और न ही सरकार इस प्रकार का कोई योगदान देती है।
3. सवाल यह उठना स्वाभाविक है कि आखिर करोड़पति सांसद पेंशन के हकदार क्यों? मैं तो यह कहना चाहता हूं कि इन आंकड़ों के आधार पर तो महज बीस फीसदी मौजूदा सांसद ही ऐसे होंगे जिनके बारे में कहा जा सकता है कि उनके सांसद न रहने पर जीवन यापन के लिए पेंशन जरूरी होगी। हमें यह बात समझनी चाहिए कि इस देश की आजादी के तत्काल बाद जो सांसद पहली बार चुने गए उनमें अधिकांश आजादी के आंदोलन की उपज थे। ये सब सेवाभाव से राजनीति में आए थे। तब तो इनकी पेंशन का प्रावधान भी नहीं था।
4. जब सांसदों को पेंशन मिलना शुरू हुआ तब भी शर्त यह थी कि एक कार्यकाल पूरा करने वालों को ही पेंशन दी जाएगी। इसके बाद नियमों में बदलाव किए जाते रहे। आज के हालात काफी बदले हुए हैं। मेरा मानना है कि दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र में अब यह वक्त आ गया कि जनप्रतिनिधि जनसेवा को छोड़कर सिर्फ अपने वेतन-भत्ते और सुविधाओं की चिंता करना छोड़ें। सिर्फ उन्हीं पूर्व सांसदों को पेंशन मिलनी चाहिए जो वास्तव में जरूरतमंद हों। किसे पेंशन मिलनी चाहिए और किसको नहीं, इसे तय करने के लिए संसद एक कमेटी गठित कर सकती है।

**संसदीय विशेषाधिकार**

1. संसदीय विशेषाधिकार वे विशिष्टि अधिकार हैं जो संसद के दोनों सदनों को, उसके सदस्यों को और समितियों को प्राप्ति है। विशेषाधिकार इस दृष्टिं से दिए जाते हैं कि संसद के दोनों सदन, उसकी समितियां और सदस्य स्व तंत्र रूप से काम कर सकें। उनकी गरिमा बनी रहे परंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि कानून की नजरों में साधारण नागरिकों के मुकाबले में विशेषाधिकार प्राप्त सदस्यों की स्थिति भिन्न है। जहां तक विधियों के लागू होने का संबंध है, सदस्य लोगों के प्रतिनिधि होने के साथ-साथ साधारण नागरिक भी होते हैं। मूल विधि यह है कि संसद सदस्यों सहित सभी नागरिक कानून की नजरों में बराबर माने जाने चाहिए। जो दायित्वं अन्य नागरिकों के हों वही उनके भी होते हैं और शायद सदस्य होने के नाते कुछ अधिक होते हैं।
2. संसदों का सबसे महत्वपूर्ण विशेषाधिकार है सदन और उसकी समितियों में पूरी स्वतंत्रता के साथ अपने विचार रखने की छूट। संसद के किसी सदस्य द्वारा कही गई किसी बात या दिए गए किसी मत के संबंध में उसके विरूद्ध किसी न्यायालय में कोई कार्यवाही नहीं की जा सकती। संसदीय विशेषाधिकारों की सूचियां तैयार की जा सकती हैं। वास्तव में ये तैयार भी की गई हैं परंतु ऐसी कोई भी सूची पूरी नहीं है। थोड़े में कह सकते हैं कि कोई भी वह काम जो सदन के, उसकी समितियों के या उसके सदस्यों के काम में किसी प्रकार की बाधा डाले वह संसदीय विशेषाधिकार का हनन करता है। उदाहरण के लिए, कोई सदस्य न केवल उस समय गिरफ्तार नहीं किया जा सकता जबकि उस सदन का, जिसका कि वह सदस्य हो, अधिवेशन चल रहा हो या जबकि उस संसदीय समिति की, जिसका वह सदस्य हो, बैठक चल रही हो, या जबकि दोनों सदनों की संयुक्त बैठक चल रही हो, या जबकि दोनों सदनों की संयुक्त बैठक चल रही हो। संसद के अधिवेशन के प्रारंभ से 40 दिन पहले और उसकी समाप्ति से 40 दिन बाद या जबकि वह सदन को आ रहा हो या सदन के बाहर जा रहा हो, तब भी उसे गिरफ्तार नहीं किया जा सकता।
3. संसद के परिसरों के भीतर, अध्यक्ष/सभापति की अनुमति के बिना, दीवानी या आपराधिक कोई कानूनी 'समन' नहीं दिए जा सकते हैं। अध्यक्ष/सभापति की अनुमति के बिना संसद भवन के अंदर किसी को भी गिरफ्तार नहीं किया जा सकता है। क्योंकि संसद के परिसरों में वल संसद के सदन के या अध्यक्ष/सभापति के आदेशों का पालन होता है। यहां अन्य किसी सरकारी प्राधिकारी के या स्थानीय प्रशासन के आदेश का पालन नहीं होता।
4. संसद का प्रत्येक सदन अपने विशेषाधिकार का स्वयं ही रक्षक होता है। विशेषाधिकार भंग करने या सदन की अवमानना करने वाले को भर्त्सना करके या ताड़ना करके या निर्धारित अवधि के लिए कारावास द्वारा दंडित कर सकता है। स्वयं अपने सदस्यों के मामले में सदन अन्य दो प्रकार के दंड दे सकता है, अर्थात सदन की सेवा से निलंबित करना और निकाल देना, किसी सदस्य को एक निर्धारित अवधि के लिए सदन की सेवा से निलंबित किया जा सकता है। किसी अति गंभीर मामले में सदन से निकाला जा सकता है।
5. सदन अपराधियों को ऐसी अवधि के लिए कारावास का दंड दे सकता है जो साधारणतया सदन के अधिवेशन की अवधि से अधिक नहीं होती। जैसे ही सदन का सत्रावसान होता है, बंदी को मुक्ति कर दिया जाता है। दर्शकों द्वारा गैलरी में नारे लगाकर और/अथवा इश्ति हार फेंककर सदन की अवमानना करने के कारण, दोनों सदनों ने, समय-समय पर, अपराधियों को सदन के उस दिन स्थगित होने तक कारावास का दंड दिया है।
6. सदन का दांडिक क्षेत्र अपने सदनों तक और उनके सामने किए गए अपराधों तक ही सीमित न होकर सदन की सभी अवमाननाओं पर लागू होता है। चाहे अवमानना सदस्यों द्वारा की गई हो या ऐसे व्यक्तियों द्वारा जो सदस्य न हों। इससे भी कोई अंतर नहीं पड़ता कि अपराध सदन के भीतर किया गया है या उसके परिसर से बाहर। सदन का विशेषाधिकार भंग करने या उसकी अवमानना करने के कारण व्यकक्तिबयों को दंड देने की सदन की यह शक्ति संसदीय विशेषाधिकार की नींव है। सदन की ऐसी परंपरा भी रही है कि सदन का विशेषाधिकार भंग करने या सदन की अवमानना करने के दोषी व्यक्तियों द्वारा स्पष्ट रूप से और बिना किसी शर्त के दिल से व्यक्त किया गया खेद सदन द्वारा स्वीकार कर लिया जाता है। ऐसे में साधारणतया सदन अपनी गरिमा को देखते हुए ऐसे मामलो पर आगे कार्यवाही न करने का फैसला करता है।

## संभावित प्रश्न

**सांसदों को अपनी विश्वसनीयता में वृद्धि करने के लिए अपने संसदीय विशेषाधिकारों एवं अपने पेंशन को लेकर सुधार करने की आवश्यकता है। इस कथन से आप कहाँ तक सहमत हैं? चर्चा करें।**